THE ECONOMIC TIMES

Date: 22-10-16

Don't Let the Cards Be Swiped

Early this week, the news that debit cards of about 3.2 million users of a few prominent banks in India have been compromised created a sense of panic across the country. Initial indications are that malware — a computer 'worm', or a software specifically designed to disrupt or damage a computer system — penetrated through a particular but prominent brand of ATM switch operated by a well-known private bank and then infected the ATM switch of the National Payments Corporation of India (NPCI). This malware remained at the NPCI switch for more than a couple of months and picked up data from cards from many banks that used the system. This probably went undetected until September when fraudulent debit cards were used in China and the US that showed them belonging to customers who were actually in India.Customers from 19 leading banks such as State Bank of India, ICICI Bank, HDFC Bank and Axis Bank were reportedly affected. These banks have advised most of their customers to change their passwords and personal identity numbers (PINs) and have also even blocked debit cards in many cases.While the matter is still under investigation and the finance ministry has sought a report from the Reserve Bank of India (RBI) and the NPCI on the breach, many issues arise on the preparedness of the whole financial ecosystem to respond to cyber security and data breach challenges.

The banking system is a critical information infrastructure in most countries. Today, with the expanse of online banking and e-commerce, its security is crucial. And the RBI is concerned about the situation. The central bank has moved a long way from its 2001 easy-to-go guidelines for cyber security in banks to the comprehensive cyber security framework in banks issued in June 2016. Broadly speaking, its approach so far has been to have a cyber security policy approved by the boards in banks, this being distinct from the bank's IT and information security policies of the bank.The cyber security policy also includes an arrangement for continuous surveillance, to orient IT architecture that is conducive towards security, to comprehensively address network and database security, and to ensure protection of customer information.

Apart from that, the policy has a cyber crises management plan, incorporates the sharing of cyber security incidents with the RBI, maintains a supervisory reporting framework, and has baseline cyber security and resilience requirements. These look almost foolproof. Yet, implementing them seems to be far more difficult and a long way off.More than the supervision part, banking competitiveness and the market forces should have driven both banks and the payment ecosystem to invest heavily and constantly to manage and monitor security priorities.

Unfortunately, this has not been the case. In fact, it has been the opposite with banks trying to hide security breaches as much as they can, thereby refraining from reporting them to the Computer Emergency Response Team India (CertIn) or to the Indian Banks Centre for Analysis of Risks and Threats (IB-CART) set up by the Institute for Development and Research in Banking Technology (IDRBT) under the RBI. The need for the IB-CART as a fully equipped financial sector security centre with capabilities around managed security services, incident reporting and mitigation has to be done on a priority basis. Also, most banks have very poor cyber security best practices awareness drives and campaigns for customers and users.Apart from this latest incident, there are numerous cases of phishing — the practice of sending emails pretending to be from reputable companies to induce individuals to reveal personal information such as passwords and credit card numbers online. Gullible customers end up bearing the brunt in the absence of proper information campaigns.

In February, $81 million was stolen from the central bank of Bangladesh in a cyber heist from the Federal Reserve Bank of New York with fraudulent SWIFT (Society for Worldwide Interbank Financial

Telecommunication) transactions and an attempt was made to steal $951 million. While this raised an alarm globally, nothing much really happened in terms of readiness.This was partly because it didn't impact a 'big country' and partly because if a ruckus was made, the whole ecosystem that facilitated these transactions would expose the poor cyber security measures in place. But the incident has pushed advanced nations to seriously look at the cyber security preparedness for the financial sector.While cyber security has received priority under the Indian government, the need for significant investments to define and secure critical assets is crucial.A cyber audit of the network deployments is needed, and an overall plan for security has to be implemented, the failure for which should be heavily penalised.

Subimal Bhattacharjee The writer is a defence and cyber security analyst

---

दैनिक भास्कर

Date: 22-10-16

हिंदुत्व नहीं, थोक वोट पर बहस की जाए

आजकल सर्वोच्च न्यायालय इस मुद्दे पर विचार कर रहा है कि राजनीति में धर्म का इस्तेमाल किया जाए या नहीं? 20 साल पहले इसी अदालत का दिया गया वह निर्णय भी बहस का मुद्दा है कि हिंदू धर्म, धर्म नहीं है। वह जीवन-पद्धति है? क्या हिंदुत्व को धर्म या मज़हब या रिलीजन कहा जा सकता है? जाहिर है कि यह मुद्दा इतना उलझा हुआ है कि इस पर एक राय नहीं हो सकती। यदि अदालत कोई दो-टूक फैसला सुना देगी तो भी लोग उसे मानेंगे या नहीं, कुछ पता नहीं। आखिरकार, संसद को ही इस मसले पर कानून बनाना पड़ेगा। पिछले 20 साल से संसद इस मुद्दे पर मौन हैअसल बात तो यह है कि अकेली संसद और अदालतें इस मुद्दे को तय नहीं कर सकतीं। इस पर एक विराट राष्ट्रीय बहस की जरूरत है, जिसमें धर्मों के धुरंधर, दर्शन के विद्वान, राजनीति-शास्त्री और तरह-तरह के संगठन अपने विचार खुलकर व्यक्त करें। अभी अदालत के सामने असली मुद्दा यह है कि क्या धर्म के नाम पर वोट मांगे जा सकते हैं? क्या यह जन-प्रतिनिधित्व कानून का सरासर उल्लंघन नहीं है? धर्म के नाम पर वोट कब नहीं मांगे गए? धर्म ही नहीं, जाति, भाषा और व्यवसाय के नाम पर वोट मांगे जाते रहे हैं। केंद्र और प्रदेशों में ऐसी कई सरकारें चलती रही हैं, जिनके चुनाव-प्रचार में उपरोक्त आधारों पर थोक वोट बटोरे गए हैं। यहां असली समस्या 'थोक वोट' की है। थोक वोट लेने के लिए कभी धर्म, कभी जाति और कभी धंधों का सहारा खुलकर लिया जाता है। कभी हिंदू वोट, कभी मुस्लिम वोट, कभी ईसाई वोट, कभी सिख वोट और कभी ब्राह्मण वोट, कभी राजपूत वोट, कभी बनिया वोट, कभी पिछड़ा, कभी आदिवासी और कभी अनुसूचित वोट उभरकर सामने आ जाता है। जब थोक में ही वोट लेना है तो फिर कोई सीमा क्यों? इसलिए किसान वोट, जवान वोट जैसे नारे भी अक्सर सुनने में आ जाते हैं। थोक वोट का अर्थ होता है, ऐसा वोट जिसे देते वक्त नागरिक अपने विवेक को ताक पर रख देता है। वह अपने विवेक का कम, अपनी थोक पहचान का इस्तेमाल ज्यादा करता है। पार्टियों को प्रायः ऐसे ही वोट की तलाश रहती है। धर्म या मज़हब या जाति की पकड़ इंसान पर सबसे ज्यादा होती है। यह उसकी पहचान होती है, इसीलिए सभी पार्टियां इसका सहारा लेने में जरा भी नहीं चूकती हैं।

अब सवाल सिर्फ धर्म का ही नहीं है, सर्वोच्च न्यायालय को यह भी सोचना होगा कि थोक वोट का क्या इलाज किया जाए? जहां तक धर्म का सवाल है, यदि गांधीजी की कही मानें तो वे कहते थे कि राजनीति को धर्म से अलग कर ही नहीं सकते। वे कहते थे कि मेरी राजनीति ही मेरा धर्म है। यहां धर्म का मतलब संप्रदाय नहीं है, मज़हब नहीं है, रिलीजन नहीं है बल्कि कर्तव्य है। यह धर्म अदालत की चिंता का विषय नहीं है। उसकी चिंता का विषय 'हिंदुत्व' है। क्या हिंदुत्व को धर्म माना जा सकता है? वास्तव में हिंदुत्व न तो धर्म के

वास्तविक हिसाब से धर्म है और न ही सांप्रदायिक अर्थ में धर्म है। यह शब्द ही अपने आप में एक पहेली है। हिंदू लोग जिन्हें अपने पवित्र धर्मग्रंथ मानते हैं, उनमें हिंदू शब्द का कहीं उल्लेख भर भी नहीं है। न वेदों में, न दर्शनों में, न उपनिषदों में, न गीता में! उल्लेख कहां से होता? यह शब्द तो मुसलमानों का दिया हुआ है। वे भारत में आए, 11-12वीं सदी में। उन्होंने उस समय के हर भारतीय को हिंदू कहा। आज भी उनके लिए हर भारतीय हिंदू है, क्योंकि वह हिंद का वासी है। हिंद क्या है, सिंध है। अरबी और ईरानी लोग 'स' को 'ह' बोल देते हैं। सिंधु नदी के पार रहने वाले सभी भारतीय हिंदू हैं। भारतीय मुसलमान और ईसाई भी जब आजकल अरब और फारस के देशों में जाते हैं तो उन्हें कभी 'हिंदू' और कभी 'हिंदी' बोला जाता है। इस दृष्टि से हिंदुत्व शब्द असीम बन जाता है, लेकिन हिंदुत्ववादियों से आप पूछें तो वे तुरंत बता देंगे कि भारत में गैर-हिंदू लोग कौन-कौन हैं? इन गैर-हिंदुओं से आप पूछें तो वह आपको साफ-साफ कहेंगे कि वे हिंदू नहीं हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि सैद्धांतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से हिंदू शब्द का अर्थ चाहे जितना व्यापक हो, आज व्यावहारिक दृष्टि से वह एक जन-विशेष का परिचायक है। वह धर्म-विशेष का परिचायक नहीं है, क्योंकि अपने आप को हिंदू कहने वाला आदमी यह भी कह सकता है कि वह किसी धर्म को नहीं मानता। वह नास्तिक है। आप उसे गैर-हिंदू नहीं कह सकते।

हिंदू धर्म जैसा लचीला धर्म दुनिया में कोई और नहीं है। जो भगवान को माने, वह भी हिंदू और जो न माने, वह भी हिंदू। जो मूर्तिपूजा करे और जो न करे, जो एक परमेश्वर को माने और सैकड़ों देवी-देवताओं को माने- वे सब हिंदू हैं। इसका अर्थ क्या हुआ? क्या यह नहीं कि हिंदू धर्म अन्य धर्मों की तरह मज़हब नहीं है, रिलीजन नहीं है, संप्रदाय नहीं है। संगठित नहीं है। इसमें कोई पोप, कोई मुफ्ती, कोई धर्मगुरु नहीं है। इसलिए अदालत यदि हिंदू या हिंदुत्व को धर्म घोषित करेगी तो वह बिल्कुल भी तर्कसंगत नहीं होगा। इसीलिए हिंदू धर्म को 20 साल पहले सर्वोच्च न्यायालय ने जीवन-पद्धति कहा था। ऐसी जीवन-पद्धति, जो उसे मानने वालों को असीम आजादी देती है। जहां तक 'हिंदुत्व' का सवाल है, यह शब्द धार्मिक कम, राजनीतिक ज्यादा है। इसका प्रयोग चाहे शिवाजी ने किया हो या सावरकरजी ने! हिंदुत्व का नारा देने वाले कौन हैं? सावरकरजी! इस शब्द पर ग्रंथ लिखा, विनायक दामोदर सावरकर ने! वे स्वयं नास्तिक थे। वे गोमांस-भक्षण के विरोधी नहीं थे। उनके लिए सारे मांस-भक्षण एक-जैसे हैं। वे महान तर्कशास्त्री थे। जो लोग आज 'हिंदुत्व' के सबसे बड़े वकील बनते हैं, उनका धर्म या धर्मशास्त्रों से क्या लेना-देना है? वे वेदों और उपनिषदों के नाम तक नहीं जानते। इसीलिए अदालत हिंदुत्व को धर्म घोषित करने के पहले हजार बार सोचेगी।

इस समय सर्वोच्च न्यायालय को हिंदुत्व शब्द की चीर-फाड़ में समय और दिमाग खपाने की बजाय थोक वोट की सारी तिकड़मों पर कड़े प्रतिबंध लगाने चाहिए। जाहिर है कि कानूनी प्रतिबंधों से मनुष्यों की इस भेड़-चाल पर पूर्ण प्रतिबंध लगाना लगभग असंभव है। जरूरी यह है कि भारत के नागरिकों में शिक्षा और प्रचार के द्वारा ऐसी जागरूकता पैदा की जाए कि वे अपना अमूल्य वोट देते समय अपने विवेक का प्रयोग करें। वे मनुष्य हैं। वे बुद्धि और निर्णय-क्षमता संपन्न हैं। वे पशुओं के रेवड़ की तरह वोट क्यों डालें?

वेदप्रताप वैदिक भारतीय विदेश नीति परिषद के अध्यक्ष

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 22-10-16

असरदार विश्व शक्ति बनाएगी सॉफ्ट पावर!

फरवरी 1999 में जिस दिन अटल बिहारी वाजपेयी को लाहौर की ऐतिहासिक बस यात्रा पर निकलना था उसके पहले वाली रात उनका कार्यालय एकदम परेशान था कि आखिर आधी रात को फिल्म अभिनेता देव आनंद से संपर्क कैसे किया जाए? शायद उसी वक्त यह पता लगा था कि पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ देव आनंद के जबरदस्त प्रशंसक हैं। इस बीच देव साहब के एक और प्रशंसक को जगाकर देव साहब से पुछवाया गया कि क्या वह वाजपेयी के साथ बस यात्रा पर जाएंगे। वह खुशी से तैयार हो गए। उनका आगमन उस यात्रा की बड़ी खबर बना। हिंदी सिनेमा के इस शोमैन ने राजनेताओं, बुर्जुआ वर्ग के लोगों, आम पाकिस्तानी मीडिया सब को प्रभावित किया। टीवी कैमरा उनके पुराने कॉलेज में ठीक उस जगह पर केंद्रित हो गए जहां शायद उन्होंने एक लड़की का पहली बार चुंबन लिया था। वे 1940 के दशक के रूढिवादी दिन थे। वाजपेयी अपनी यात्रा का महत्त्व कम नहीं कर रहे थे बल्कि भारत की सॉफ्ट पावर (सांस्कृतिक प्रभाव के जरिये अंतरराष्ट्रीय रिश्तों को आकार देना) का इस्तेमाल कर रहे थे।

हाल के दिनों में पाकिस्तान के साथ सभी सांस्कृतिक खेल और अकादमिक रिश्ते खत्म करने का जो अभियान चला है वह उन दिनों की याद दिलाता है जब सॉफ्ट पावर शब्द इस्तेमाल में ही नहीं था। इस वक्त जो गुस्से भरा अभियान चल रहा है जिसमें गौतम गंभीर और सौरभ गांगुली जैसे क्रिकेटर शामिल हैं (दोनों का पाकिस्तान के खिलाफ बढिया प्रदर्शन रहा है)। कहा जा रहा है कि पाकिस्तान के साथ सारे रिश्ते खत्म कर उसे विश्व स्तर पर एकदम अलग-थलग कर दिया जाए। बाकी दुनिया पर दबाव बनाया जाए कि वह भारत के नेतृत्व में पाकिस्तान के आतंक के खिलाफ लड़ाई में शामिल हो। गोवा में ब्रिक्स सम्मेलन के पहले और उसके बाद की कुछ घटनाओं ने भारत की मई 2014 के बाद की वैश्विक शक्ति की सीमाएं उजागर की हैं। हमारे टीवी स्टूडियो के योद्घाओं और युद्घाकांक्षी पूर्व सैन्य अधिकारियों को छोड़ दिया जाए तो भारत का विश्व शक्ति होना अभी दूर की कौड़ी है।

जूनियर बुश के पहले कार्यकाल में अमेरिकी रक्षा मंत्री रहे डॉनल्ड रम्सफेल्ड से जब पूछा गया कि क्या वह सॉफ्ट पावर में यकीन करते हैं तो उन्होंने निहायत मासूमियत से कहा था कि यह क्या है? वह कड़े सैन्य कदमों के बहुत बड़े हिमायती थे। हम जानते हैं कि उन्होंने अपने पीछे कितनी गंदगी छोड़ी। अमेरिका ने इराक और अफगानिस्तान में कैसे हालात पैदा किए यह हम सबने देखा। हार्वर्ड के प्रोफेसर जोसेफ जूनियर ऐसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सन 1990 में शीतयुद्घ के बाद अपनी रचना 'बाउंड टु लीड: द चैंजिंग नेचर ऑफ अमेरिकन पॉवर' में सॉफ्ट पावर अवधारणा का उल्लेख किया था। उन्होंने 2006 में विदेश नीति संबंधी एक पत्रिका में इसका जिक्र किया। उन्होंने कहा कि बुश ने अपने दूसरे कार्यकाल में सबक सीखा और कोंडोलीजा राइस के विदेश मंत्री रहते उन्होंने सॉफ्ट पावर और सार्वजनिक कूटनीति पर जमकर ध्यान दिया। वर्ष 2006 के पर्चे में प्रो. जूनियर उन्होंने सॉफ्ट पावर को परिभाषित करने पर अधिक ध्यान दिया। उनकी मूल दलील यह थी कि सॉफ्ट पावर अनिवार्य रूप से नरम और मानवीय ही हो यह आवश्यक नहीं है। उन्होंने कहा था कि आप सॉफ्ट पावर का प्रयोग करते हैं या सख्ती बरतते हैं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि परिस्थितियां कैसी हैं। हो सकता है कि एक खुले मैदान में छिड़ी जंग को जीतने के लिए भारी भरकम टैंकों की आवश्यकता हो लेकिन वियतनाम के जंगलों में अलग ही तरीका अपनाना पड़ सकता है। उन्होंने अपनी बात को आगे स्पष्टïं करते हुए कहा कि आप किसी को बंदूक के जोर पर लूट सकते हैं, उसे किसी जल्द अमीर बनाने वाली योजना का हिस्सा बनाकर ठग सकते हैं या उसे एक आध्यात्मिक कार्यक्रम में शामिल होने के लिए प्रेरित कर उसकी संपत्ति अपने नाम करा सकते हैं। इसमें शुरुआती दोनों तरीके हार्ड पावर के हैं जबकि तीसरा सॉफ्ट पावर का। इसे भारत के वैश्विक हितों पर लागू करें या भारत-पाकिस्तान रिश्तों पर लागू करें तो? क्या सॉफ्ट पावर का संबंध केवल खाने, संस्कृति, साहित्य और खेलों से है? अगर ऐसा होता तो कोका कोला और मैकडॉनल्ड्स, माइकल जैक्सन और मडोना ने बहुत पहले सोवियत संघ को जीत लिया होता। या फिर चीन अपने खाने के जरिये हमारे दिलोदिमाग पर राज कर रहा होता। या फिर उसके खानपान का देसीकरण करने के लिए कबका हमसे जंग छेड़ चुका होता? सॉफ्ट पावर का संबंध राष्ट्रीय मूल्यों, नीतियों, लोकतंत्र की गुणवत्ता और राजनीति तथा संस्थानों की ताकत से भी है।

ऐसा नहीं है कि केवल पाकिस्तान के लोग ही हमारी फिल्में और टीवी चैनल देख रहे हैं, हमारे खेल नायकों से रौब खाते हैं या हमारी धुनें गाते-बजाते हैं। ऐसा भी नहीं है कि केवल प्रमुख पाकिस्तानी यानी खिलाड़ी और अभिनेता भारत में अपनी आजीविका कमा रहे हैं और इसलिए बेहतर रिश्तों में उनके हित जुड़े हैं। यह सारी बात मायने रखती है लेकिन केवल तभी जबकि व्यापक भारतीय प्रभाव नैतिक रूप से प्रभावी हो। एक बेहतर लोकतंत्र, एक उदार समाज, अल्पसंख्यकों के साथ व्यवहार, बोलने की आजादी, मजबूत मीडिया, अदालत, पर्यावरण कानून आदि सभी इस ब्रांड अपील में शामिल हैं। आप इसे सॉफ्ट, हार्ड या जो चाहे कहकर पुकार सकते हैं।

एक देश और समाज दूसरे को केवल आतंकियों की घुसपैठ से ही नहीं प्रभावित करता है बल्कि वह अनुकरणीय उदाहरण पेश करके भी वही काम करता है। कई उदार लोकतांत्रिक ताकतें इसका उदाहरण पेश कर चुकी हैं। करीब 25 साल पहले मालविका और तेजबीर सिंह की प्रतिष्ठिांत पत्रिका सेमिनार में मैंने एक लेख लिखा था, 'पाकिस्तान: अ हॉक्स एजेंडा'। इसमें बताया गया था कि कैसे पश्चिमी दुनिया, खासतौर पर अमेरिका ने अपने लोकतांत्रिक, उदार और सांस्कृतिक प्रभाव का प्रयोग शीतयुद्घ में सोवियत संघ को परास्त करने में किया (उस वक्त सॉफ्ट पावर शब्द नहीं था) और भारत को भी पाकिस्तान के संबंध में यही नीति अपनानी चाहिए। बतौर संवाददाता अपनी कई पाकिस्तान यात्राओं के दौरान मैं यह देखकर चकित हुआ कि भारतीय संस्थानों ने उसके नेताओं को कितना प्रभावित किया है। वहां के प्रभावी लोगों ने मुझसे कई चीजें मांगी, उनमें केंद्र राज्य संबंधों पर न्यायमूर्ति सरकारिया आयोग की रिपोर्ट भी शामिल थी। यह रिपोर्ट शाह महमूद कुरैशी ने मांगी थी जो बाद में पाकिस्तान के विदेश मंत्री बने। उस वक्त वह पाकिस्तानी पंजाब सूबे के वित्त मंत्री थे। अपने पहले कार्यकाल में जब नवाज शरीफ कराची में स्वायत्त काम करने की मांग कर रही अपनी सेना के लिए नियम कायदों पर विचार कर रहे थे तो मुझसे सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम मांगा गया था। मैं अतीत में इस बारे में लिख चुका हूं। भारत में अब तक 27 सेना प्रमुख हुए हैं जो समय पर या उससे पहले सेवानिवृत्त हुए हैं जबकि पाकिस्तान में केवल 13 ही। यह सकारात्मक प्रभाव का विषय है।

संस्कृति, अर्थव्यवस्था, व्यापार, खेल इसके बाद राष्ट्रीय हित के विविध कारकों के रूप में सामने आते हैं। क्या राजकपूर चार दशक तक समूचे कम्युनिस्ट देशों पर ऐसा ही सकारात्मक प्रभाव नहीं डालते रहे? केवल सोवियत संघ में ही नहीं बल्कि पेइचिंग तक में। थ्यान अनमन चौक पर सन 1989 में जिस सप्ताह हत्याकांड हुआ था उस वक्त होटल के कर्मचारियों ने अनधिकृत रूप से हमारी खबर फैक्स की वह भी इस शर्त पर कि हम तब तक बिना रुके आवारा हूं...गाते रहेंगे जब तक कि सारे पन्ने फैक्स नहीं हो जाते। हमारे साथ वे भी गुनगुनाते रहे। अमेरिका ने हॉलीवुड और डिजनी की यात्राओं को अंतरराष्ट्रीय नेताओं के कार्यक्रमों में शामिल कराया। वह एक व्यापक पारंपरिक और परमाणु हथियार जखीरा तैयार कर रहा था लेकिन राजनीतिक और दार्शनिक तौर पर वह सोवियत संघ के करीब जाने की प्रतिक्रिया नहीं दे रहा था। खुले समाज के लिए खुलापन एक बड़ा हथियार है। यही वजह है कि पाकिस्तान के साथ लड़ाई केवल इतनी नहीं है कि भारत छह गुना बड़ा है। बल्कि पाकिस्तान उतना ही ज्यादा कटु और असुरक्षित भी है। भारत को अगर विश्व शक्ति बनना है तो उसे सख्ती के साथ-साथ चतुराई दिखानी होगी और अपना दिल बड़ा करना होगा।

Date: 22-10-16

कृषि मंडी पर नया कानून जल्द

केंद्र सरकार राज्यों के साथ व्यापक विचार-विमर्श के बाद नया मॉडल एपीएमसी अधिनियम लाने की योजना बना रही है। गौरतलब है कि केंद्र वर्ष 2003 में बनाए गए मॉडल अधिनियम की तर्ज पर राज्यों को अपने कृषि उपज विपणन अधिनियमों में संशोधन के लिए राजी करने में नाकाम रहा है। नए मॉडल एपीएमसी अधिनियम में पिछले एक दशक के दौरान हासिल किए गए सभी अनुभवों को

शामिल किया जाएगा और गलतियों को हटाया जाएगा। हालांकि कृषि सुधारों की स्थिति के आधार पर राज्यों को रैंकिंग देने के कदम को राज्यों की मंजूरी नहीं मिलेगी क्योंकि नीति आयोग के सदस्य रमेश चंद की अध्यक्षता में कृषि सुधारों पर आज दिनभर चली बैठक में ज्यादातर राज्यों ने इसका विरोध किया था। नए अधिनियम में अनुबंध कृषि को बाहर किया जाएगा। इसमें मंडी के एक निर्धारित क्षेत्र में निजी बिक्री स्थान बनाने का प्रावधान होगा, ताकि प्रतिस्पर्धा बढ़ाई जा सके। अधिनियम में राज्यों को अपने अधिनियमों में जिंसों को बाहर करने से होने वाले राजस्व नुकसान की भरपाई का भी प्रावधान होगा।

कृषि मंत्रालय के संयुक्त सचिव अशोक दलवई ने कहा, 'नए मॉडल अधिनियम बनाया जाएगा और यह अगले 2 से 3 महीनों में मंत्रिमंडल की मंजूरी के लिए तैयार हो जाएगा।' पुराना मॉडल एपीएमसी अधिनियम 2003 में पिछली राजग सरकार में बनाया गया था। लेकिन एक दशक बीतने के बाद भी दो-तिहाई से कम राज्यों ने मॉडल अधिनियम की तर्ज पर अपने मंडी अधिनियमों में बदलाव किया है। इसी वजह से केंद्र को नया मॉडल अधिनियम बनाने के लिए बाध्य होना पड़ा। चंद ने कहा, 'नए मॉडल एपीएमसी अधिनियम के तहत राज्यों द्वारा अपने अधिनियम से कुछ जिंसों को बाहर करने के कारण होने वाले राजस्व नुकसान की भरपाई राज्य बजट या सीधे नाबार्ड के जरिये की जाएगी।'

इसके अलावा अधिकारियों ने अगले 1 से 2 साल में तीन प्रमुख सुधारों को क्रियान्वित करने का फैसला किया है। इन सुधारों में से एक यह है कि निजी जमीन में पेड़ उगाने पर प्रतिबंध हटाया जाएगा, जिससे किसान पेड़ों को बेचकर पैसा कमा सकेंगे। इसके अलावा भूमि लीज कानूनों में बदलाव किया जाएगा। प्रधानमंत्री कार्यालय (पीएमओ) से निर्देश के बाद आयोग ने 6 से 7 क्षेत्रों में सुधारों के लिए 25 एजेंडा चिह्नित किए हैं, जिन्हें अगले 3 से 5 साल में चरणबद्ध तरीके से पूरा किया जाएगा।

किसानों को मंडी प्रक्रिया से गुजरे बिना सीधे बिक्री की मंजूरी देने और निजी कृषि भूमि में पेड़ उगाने, कटाई करने और वाणिज्यिक उपयोग करने पर रोक को हटाने के बारे में रमेश चंद ने कहा कि वर्ष 2014 में पर्यावरण और वन मंत्रालय ने राज्यों को दिशानिर्देश जारी किए थे। इनमें कहा गया था कि किसानों को निजी जमीन में पेड़ उगाने और कटाई करने की आवश्यक स्वतंत्रता दी जाए। कुछ राज्यों ने अधिनियमों में बदलाव किया था, जबकि कुछ अन्य इस पर विचार कर रहे हैं। चंद ने कहा, 'हम अन्य राज्यों को भी अपने वन अधिनियम में संशोधन के लिए राजी कर रहे हैं और कुछ ने इसमें रुचि दिखाई है।' जमीन पट्टा अधिनियम के बारे में रमेश चंद ने कहा कि करीब 10 राज्यों ने अपने भूमि अधिनियमों के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया शुरू कर दी है। इन राज्यों में से एक मध्य प्रदेश है। मध्य प्रदेश के भूस्वामी और पट्टाधारकों के बीच जमीन पट्टा अधिनियम को अन्य राज्यों में अनुकरण के लिए नमूने के रूप में पेश किया जा रहा है।

THE TIMES OF INDIA

Date: 22-10-16

Closing of the Indian mind

Debates today are high on decibels but low on reason, facts and linguistic restraint

Sometimes jokes become unintended metaphors for much wider concerns. There is this one about a gentleman driving a car who abruptly turns without giving a signal. Not unexpectedly, there was an accident. 'Why did you

turn without giving a signal?' asked the furious driver of the car behind. 'You could not see such a big car turning, how would you see a small indicator?' was the prompt reply.The aggrieved person was stumped. Absurdity had overwhelmed reasoned argument. There was a 'dialogue' but it was bereft of meaning. It had, in fact, reduced itself to farce.

Is this form of 'dialogue' becoming endemic in India? If so, the primary responsibility lies with our voluble political class. It monopolises most of the visible public space for debate, but rarely do we find interaction that enlightens and informs. Instead, we have people shouting at each other, high on decibel points, but low on reason, facts and linguistic restraint. Parliamentary debates, where leaders spoke with eloquence and substance have almost become a thing of the past.In such a milieu the real loser is the ordinary citizen for she has almost no chance to hear political leaders calmly debate issues, or to evaluate, through exposure to reasoned discussion, what political parties have to offer in response to larger national issues and constituency-specific needs. In many other democratic systems, opposing candidates meet to debate issues in institutionally organised public forums, such as the Donald Trump versus Hillary Clinton face-offs we just witnessed.Some democracies have the system of primaries that enables voters to actively participate in a pre-election exercise so that they come to know through the process of debate not only the calibre of the candidates but also the issues of the day. None of this happens in our democratic system.

What we mostly hear is leaders holding forth without waiting to hear a response. For instance Prime Minister Narendra Modi, who is an eloquent speaker, has perfected the art of the one-way monologue. He addresses people on radio, TV or from elevated, inaccessible podiums. It is difficult to remember the last time he met ordinary people, including journalists, in a forum where they could interact with him in a non-prearranged format.The dialogic remoteness of some of our leaders has a lot to do with the lack of inner party democracy. India, the world's largest democracy, must face up to the fact that it is replete with absolute leaders who are completely undemocratic in the way they run their political parties.

We are increasingly living in an era of absolute leaders, absolute dynasties, absolute subjects and absolute followers. The freedom of conscience given to politicians in the UK for the vote on Brexit would be unthinkable in India.Anyone who would have dared to vote against his party leader's choice would be automatically labelled as disloyal, and be dealt with accordingly. This frozen intellectual conformity, and the mind-numbing sycophancy it breeds, seriously jeopardises our democratic credentials.

The educated are also increasingly culpable of cerebral laziness. The explosion of 24×7 news has reduced information to a few quick sound bytes, or the reiteration of selective facts, or panel discussions that rarely offer in-depth insights. But, paradoxically, this very exposure, in this superficial 'breaking news' fashion, gives the average middle class person the sense that he knows it all, even if he actually knows very little about almost everything.

Moreover, the informational blitzkrieg hardly devotes required space to pivotally important but less 'glamorous' issues like the appalling state of health or education, or the plight of farmers, thereby further constricting the canvas of debate to only the frenetic pace of transitory political developmentsIn the past, all our seminal works emphasised the importance of democratic dialogue. Vatsyayana begins his Kama Sutra by allowing an imaginary interlocutor to question him on the need for a book on erotica. The Upanishads are not a fiat; they nudge you to think and question.Badarayana's Vedanta Sutra, ranked along with the Upanishads and the Bhagwad Gita as one of the three foundational texts of Hindu philosophy, has an entire section authored by him on the objections to his thesis. Shankaracharya's Bhashya (commentary) on the Vedanta Sutra has lengthy tracts where he invites objections and is willing to debate the validity of his point of view.

The tragedy is that this deliberative pillar of our civilisation is being gradually asphyxiated *after* India has become a democracy. Perhaps, it was not so evident in the years immediately after 1947, where differences in opinion were taken on board with an open mind and without questioning bonafides.

But today every point of view is articulated as a simplistic dictatorial assertion, as is amply illustrated, for instance, in the ongoing debate on nationalism. There are no nuances, only the projection of brittle black or white certainties. Rhetoric has overtaken substance thereby reducing public debate to the lowest common denominator of 'I am right, and you are wrong'. In such a milieu, the shallow repartee in the joke we began this column with, will always prevail.

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date: 21-10-16

At ease with the world

Under PM Modi, a new synergy between India's economic and foreign policy.

Prime Minister Narendra Modi has been able to leverage India's economic advantages to improve international relations and vice versa. He recognises that India's ambition to become a $10-trillion economy and create 175 millions jobs by 2032 will depend on linking the country's foreign policy to domestic transformation. The Modi government's policies have been geared to attract foreign capital and towards regional stability, peace and prosperity.

The prime minister's personal rapport with international leaders has significantly enhanced India's profile and given it a confidence never seen before. Western economies are facing serious challenges. Global economic growth is seeing a downward trend. However, Modi has been successful in convincing the international community that India will realise its true potential as an economic power. He has removed apprehensions about corruption and showed commitment to reforms in tax and corporate laws, better resource allocation, faster government clearances, removal of bureaucratic hurdles and retrospective taxation. Two major apprehensions under the UPA regime — policy paralysis and large-scale corruption — have been effectively checked.

The government has embarked on initiatives like Make in India, Digital India, Smart Cities, Clean India, Clean Ganga, GST and the bankruptcy law, speeded up project clearances and revived stalled projects.

Over the years, bilateral trade relations and agreements have gained enormous significance in the international business arena and are now more influential than multilateral pacts like the WTO and GATT. It is becoming more and more difficult to bring developing countries to common agreeable points at multilateral platforms and, therefore, small trade blocks like ASEAN, SAARC and BRICS and bilateral Free Trade Agreements have gained prominence. PM Modi has leveraged this trend to India's economic and strategic advantage. Over a span of two years, he has visited more than 42 countries and nurtured new developmental and economic blocks. The Act East policy, connecting Bhutan Bangladesh India Nepal (BBIN) through GPS and common licensing policy, a road corridor from the North East to Myanmar are commendable initiatives.

The Modi government ratified the Land Border Dispute Agreement (LBA) and addressed the maritime boundary dispute with Bangladesh. It fast-tracked development projects in Afghanistan. India's participation

in the development of the Chabahar port in Iran and forging a trilateral pact to build a land transit-and-trade corridor through Afghanistan are stepping stones for bigger future involvement. The PM's Tehran visit underlined the changing context of Iran, now a stable and resourceful country and important for our energy security.

India-Japan relations are at their best. India hopes to attract $5.5 billion of investments from Japan. Modi has built a good rapport with the German chancellor. Germany is the key provider of high-end technology and has surplus capital. India is looking forward to both technology and capital investment from Germany. In partnership with France, India has established the International Solar Alliance, with the head office in Gurgaon. This alliance, with 120 countries as members, aims to harness the country's solar power potential.

Modi's reconnect with Central Asia has also been a crucial intervention: Uzbekistan has strong cultural ties with India, Turkmenistan is rich in energy, Kazakhstan has huge hydro potential while Tajikistan is historically significant. Africa offers India a massive opportunity to expand our global economic footprint. The continent is an important market for the Indian economy. The 54 African states have a combined GDP, which is larger than that of India. The third India-Africa Summit in New Delhi in 2015 focused on enhancing India's engagement with Africa.

A visionary step of PM Modi was leveraging India's powerful diaspora. While empowering the diaspora in their domicile countries, the government has coordinated with them for advocacy and building influence. He sought to connect directly with NRIs in a unique fashion. His first outreach in New York — at Madison Square Garden — attracted 15,000 NRIs. About 5,000 people attended his meeting in Beijing whereas over 60,000 people turned up for the Wembley Stadium programme. The significance of the diaspora is self-evident in the flow of remittance to India: According to the World Bank, India received $72 billion in 2015 as foreign remittance, making it the world's largest remittance-receiving country.

India is now among the world's top destinations for FDI flows. It has attracted investment of close to $200 billion from foreign investors. In 2014, India's total trade was 46 per cent of the GDP. India plans to double its aggregate global trade over the next decade. Our targets for 2019 include becoming the top start-up destination in the world, achieving 60 per cent digital penetration and increasing the share of manufacturing in GDP from 16 per cent to 25 per cent by 2022.

Gopal Krishna Agarwal The writer is national spokesperson, BJP

जनसत्ता

Date: 21-10-16

अधिकार बनाम कर्तव्य

चुनाव आयोग ने एक बार फिर अनिवार्य मतदान के विचार को खारिज कर दिया है। मुख्य निर्वाचन आयुक्त नसीम जैदी ने बुधवार को कहा कि ऐसा कोई भी प्रस्ताव इतने बड़े देश के लिए व्यावहारिक नहीं होगा।

चुनाव आयोग ने एक बार फिर अनिवार्य मतदान के विचार को खारिज कर दिया है। मुख्य निर्वाचन आयुक्त नसीम जैदी ने बुधवार को कहा कि ऐसा कोई भी प्रस्ताव इतने बड़े देश के लिए व्यावहारिक नहीं होगा। साथ ही आयोग ने विधानसभा और लोकसभा चुनाव एक साथ कराने से भी इनकार कर दिया। कहा कि इसमें नौ हजार करोड़ रुपए का खर्च आएगा। पर सबसे बड़ी दिक्कत कानूनी मोर्चे पर है। लोकसभा और सारी विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराने के लिए सर्वसम्मति से संविधान संशोधन करना होगा। हालांकि उन्होंने यह कह कर बहस की गुंजाइश बनाए रखी है कि इस सिलसिले में और विचार आने चाहिए। अनिवार्य मतदान की पहल भाजपा की ही गुजरात सरकार ने की थी। पर याद रहे कि फरवरी में लोकसभा में जब अनिवार्य मतदान पर एक गैरसरकारी विधेयक पेश हुआ, तो उसका जवाब देते हुए खुद तब के कानूनमंत्री डीवी सदानंद गौड़ा ने कहा था कि अनिवार्य मतदान को लागू करना और मतदान न करने वालों को दंडित करना संभव नहीं होगा। विधि आयोग ने मार्च में चुनाव सुधारों पर अपनी रिपोर्ट दी, तो उसमें चुनावी चंदे की पारदर्शिता सुनिश्चित करने सहित अनेक अहम सुझाव थे, पर अनिवार्य मतदान की सिफारिश नहीं थी, बल्कि आयोग ने कई वजहों से इसे अत्यंत अनुपयुक्त बताया। इससे काफी पहले, 2009 में सर्वोच्च अदालत ने एक याचिका पर सुनवाई करते हुए अनिवार्य मतदान की मांग खारिज करदी थी।अदालत ने कहा था कि ऐसा करना'अमानवीय तरीका' होगा।दरअसल, हमारे संविधान के मुताबिक मतदान एक मौलिक नागरिक अधिकार है, न कि कर्तव्य। संविधान के इस बुनियादी प्रावधान को कोई राज्य सरकार कैसे बदल सकती है? केंद्र सरकार भी नहीं बदल सकती। अनिवार्य मतदान का प्रावधान शायद संसदीय सर्वसम्मति से किया जा सके, पर वैसी आम सहमति क्या बन पाएगी? और वैसा करना क्या वांछनीय होगा? असल में अनिवार्य मतदान को लेकर हाल के दिनों में बहस इसलिए भी कुछ ज्यादा तेज हुई कि प्रधानमंत्री जब गुजरात के मुख्यमंत्री थे, उसी दौरान राज्य के स्थानीय निकाय चुनावों में अनिवार्य मतदान का विधेयक विधानसभा में पारित हुआ था; इसमें मतदान न करने वालों पर सौ रुपए का जुर्माना लगाने का भी प्रावधान था। लेकिन उच्च न्यायालय ने इस विधेयक पर रोक लगा दी। एक ऐसा विधेयक, जो न तो संविधान-प्रदत्त नागरिक अधिकारों से मेल खाता हो न जन-प्रतिनिधित्व कानून से, वह न्यायिक समीक्षा में कैसे ठहर सकता था? विधि विशेषज्ञ, मानवाधिकार कार्यकर्ता और चुनाव आयोग के कुछ पूर्व और वर्तमान सदस्य भी इस मसले पर बंटे हुए हैं। कुछ विधि विशेषज्ञों का कहना है कि मतदान को अनिवार्य बनाने के बजाय इसे नागरिकों की मूल जरूरत के तौर पर परिभाषित किया जाना चाहिए। लेकिन ज्यादातर मानते हैं कि मतदान को अनिवार्य बनाने का कोई औचित्य नहीं है। अनिवार्य मतदान के पक्ष में प्रमुख दलील यह दी जाती है कि इससे मतदान शत-प्रतिशत होगा, लोकतांत्रिक प्रक्रिया में नागरिक भागीदारी बढ़ेगी और इससे हमारे लोकतंत्र को मजबूती मिलेगी। लेकिन मतदान का प्रतिशत बढ़ने का असल महत्त्व तभी है जब मतदान स्वैच्छिक हो। जब लोकसभा और विधानसभा में यानी सदन में मतदान में शामिल न होने का विकल्प खुला रहता है, तो करोड़ों लोगों पर अनिवार्यता का बंधन क्यों, जो अपने क्रियान्वयन में उत्पीड़नकारी साबित हो सकता है, अव्यावहारिक तो है ही।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 21-10-16

सुलग रहे हैं गांव

राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो की ताजा रपट में कहा गया है कि देश में कृषक दंगे 2015 में 327 प्रतिशत बढ़ गए। इनमें से ज्यादा घटनाएं बिहार, उत्तर प्रदेश व झारखंड में हुईं। इन तीनों प्रांतों में कुल जितने दंगे हुए, वे इस अवधि में देश भर में हुए कृषक दंगों का 82 प्रतिशत थे। लेकिन यह वर्गीकरण भ्रामक है। भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 151 और 153 (ए) के तहत जो मामले दर्ज किए जाते हैं, उनको ही दंगे की कोटि में गिना जाता है। लेकिन कृषक दंगों के बारे में कोई स्पष्ट राय नहीं है, और न कोई कानूनी परिभाषा। पुलिस के कुछ आला अफसरों के मुताबिक, यह जमीन से संबंधित मसला है।कृषक नेताओं का मानना है कि यह राजनीतिक संकट है, इसका कारण सिर्फ आर्थिक नहीं है। यह गंभीर कृषक संकट की अभिव्यक्ति है। उत्पादन में कमी, कृषि उत्पादों की बढ़ती लागत, वैकल्पिक रोजगार की कमी और विकास के अभाव के फलस्वरूप इसका आविर्भाव हुआ है। ऐसे दंगे किसी को भी बिहार-उत्तर प्रदेश में देखने को मिल जाएंगे। ये दोनों राज्य अति उत्पादक गंगा के मैदान में हैं, जहां सिंचाई के साधन, खासकर नहरें भी हैं। पर विगत दो साल से सूखे व अनाज की बढ़ती कीमतों ने समस्या को गंभीर बना दिया। विरोध प्रगट करते किसान आस-पास के शहर में जमा होते हैं और आनन-फानन समाधान मांगते हैं। ये सारे विरोध प्रशासन के खिलाफ होते हैं, चाहे नौकरी की मांग हो या आरक्षण की। साफ है, एक गुस्सा सुलग रहा है, जो किसी दिन लपटों में बदल सकता है।

Date: 21-10-16

कृत्रिम दिमाग के फायदे हैं और जोखिम भी

यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है कि मैं इस लिवरहल्म सेंटर फॉर द फ्यूचर ऑफ इंटेलिजेंस के उद्घाटन समारोह का हिस्सा हूं। हमने काफी वक्त इतिहास के अध्ययन में खर्च किया है, जो ज्यादातर मूर्खताओं का इतिहास है। लिहाजा यह एक सुखद बदलाव है कि लोग अब इतिहास की बजाय इंटेलिजेंस के भविष्य को जानने की कोशिश कर रहे हैं।

इंटेलिजेंस यानी अक्लमंद होना मानव का मुख्य गुण है। हमारी सभ्यता ने जो कुछ भी उपलब्धियां हासिल की हैं, वे मानव-बुद्धि का नतीजा हैं। फिर चाहे आग के इस्तेमाल में महारत हासिल करना हो, अनाज उपजाना हो या ब्रह्मांड को समझना। मेरा मानना है कि नैसर्गिक बुद्धि से अर्जित मुकाम और कंप्यूटर जैसे कृत्रिम दिमाग के बूते हासिल उपलब्धियों में बहुत बड़ा फर्क नहीं है। फिर भी कह सकते हैं कि सैद्धांतिक रूप से कंप्यूटर मानव बुद्धि का मुकाबला कर सकता है, और उससे आगे भी जा सकता है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस यानी कृत्रिम बुद्धिमता पर दुनिया भर में अध्ययन तेज हुए हैं। इसमें भारी निवेश भी हो रहा है। स्वचालित कारों का निर्माण हो या कंप्यूटर का गो (खेल) जीतना जैसी उपलब्धियां यह बताने को काफी है कि हम किधर जा रहे हैं? बुद्धिमता सृजन के लाभ काफी व्यापक हैं। जब हमारा दिमाग किसी आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से संचालित होगा, तो हम किस उपलब्धि को पा सकते हैं, यह अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। संभव है कि इस नई क्रांति के बूते हम उस नुकसान की भी भरपाई कर सकें, जो औद्योगिकीकरण की वजह से इस संसार को हुआ है।

इसके पास यह ताकत भी है कि हम गरीबी और बीमारी को खत्म करने का अपना लक्ष्य पाने में सफल होंगे। संक्षेप में कहें, तो आर्टिफिशियल इंजेलिजेंस का निर्माण हमारी सभ्यता के इतिहास की सबसे बड़ी घटना होगी। हालांकि सच यह भी है कि अगर हमने इसके जोखिम से बचने का तरीका नहीं ढूंढ़ा, तो सभ्यता खत्म भी हो सकती है। तमाम लाभ के बावजूद आर्टिफिशियल इंजेलिजेंस के अपने खतरे हैं। इसकी मदद से शक्तिशाली स्वचालित हथियार बन सकते हैं या फिर ऐसे उपकरण, जिनके सहारे चंद लोग एक बड़ी आबादी का शोषण कर सकें। यह अर्थव्यवस्था को भी बड़ी चोट पहुंचा सकती है।

यह भविष्य में अपनी सोच भी विकसित कर सकती है, जिसका हमारे साथ संघर्ष हो सकता है। कुल मिलाकर एक सशक्तिशाली कृत्रिम बुद्धिमता का उदय हमारे लिए फायदेमंद भी होगा और नुकसानदेह भी। फिलहाल हम नहीं जानते कि इसका स्वरूप आगे क्या होगा? इसीलिए मैंने और कुछ अन्य लोगों ने इस संदर्भ में और ज्यादा शोध किए जाने की बात कही थी। मुझे खुशी है कि मेरी यह बात सुनी गई है। निश्चय ही, इस सेंटर में होने वाले शोध हमारी सभ्यता और मानव जाति, दोनों के लिए महत्वपूर्ण होंगे।

केंब्रिज यूनिवर्सिटी में दिया गया भाषण स्टीफन हॉकिंग प्रसिद्ध वैज्ञानिक